International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 29-07-2026, Accepted: 28-08-2026, Published: 12-09-2026
Volume 12, Issue 3, 2026, Page No. 155-158

राधाकृष्ण: साहित्यिक संवेदना से सांस्कृतिक चेतना तक

पुनीता कुमारी श्रीवास्तव
शोधार्थी, हिंदी विभाग, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

सारांश
इस शोध आलेख में हिंदी साहित्य के एक महत्वपूर्ण रचनाकार "राधाकृष्ण" के साहित्यिक व्यक्तित्व और उनके बहुआयामी योगदान का अध्ययन किया गया है। "राधाकृष्ण" ने अपने लेखन के माध्यम से समाज के सामान्य, वंचित और संघर्षशील लोगों के जीवन को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया। उनकी रचनाओं में ग्रामीण जीवन, मानवीय संबंधों, सामाजिक विषमता और आम व्यक्तियों की समस्याओं का सहज तथा यथार्थ चित्रण मिलता है। झारखण्ड के जनजीवन, वहाँ की संस्कृति, परंपराओं और सामाजिक परिवेश को हिंदी साहित्य में पहचान दिलाने में उनका इनका बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मगर सोचने वाली बात ये है कि ऐसे साहित्यकार को बहुत कम ही याद किया जा रहा है और इनपर शोध भी बहुत कम ही हुए है। बहुत से ऐसे लोग हैं, जिनको राधाकृष्ण के बारे में कोई जानकारियां ही नहीं है।
"राधाकृष्ण" केवल साहित्यकार ही नहीं थे, बल्कि उन्होंने तो पत्रकारिता और संपादन कार्य को भी पूरे निष्ठा और जिम्मेदारी के साथ पूरा किया। पत्रकारिता को उन्होंने केवल अपने विचार व्यक्त करने का माध्यम नहीं माना, बल्कि उसे तो समाज और साहित्य को जोड़ने का एक प्रभावी माध्यम बनाया। संपादक के रूप में भी उन्होंने साहित्यिक और सामाजिक विषयों को उचित स्थान देकर नए विचारों और रचनाकारों को आगे आने का अवसर दिया। इस शोध आलेख में उनके प्रमुख रचनाओं, यथार्थवादी शैली, साहित्यिक दृष्टि, पत्रकारिता तथा संपादकीय कार्यों का अध्ययन करते हुए हिंदी साहित्य में उनके विशेष योगदान को समझने का एक मूलभूत प्रयास किया गया है। "राधाकृष्ण" का साहित्य आज भी सामाजिक संवेदना और मानवीय मूल्यों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है।

मूल शब्दः राधाकृष्ण, झारखंड, आदिवासी संस्कृति, हिंदी साहित्य, "आदिवासी पत्रिका", प्रेमचंद, साहित्यिक संवेदना, पत्रकारिता, सामाजिक चेतना, इत्यादि

हिंदी साहित्य का इतिहास केवल उन साहित्यकारों से ही बंधा हुआ नहीं है, जिन्हें राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक प्रसिद्धि मिली है। इसके निर्माण में ऐसे अनेक रचनाकारों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है, जिन्होंने अपने समय, समाज, संस्कृति और जनजीवन को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया, किंतु साहित्य के मुख्य केंद्रों से दूर रहने के कारण चर्चा में नहीं आ सके। उन्हीं में से एक बहुमुखी प्रतिभा वाले साहित्यकार थे "राधाकृष्ण"। झारखंड के हिंदी साहित्य और सांस्कृतिक चेतना के विकास में इनका बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। फिर भी ज्यादा लोगों को इनके बारे में जानकारियाँ नहीं है। राधाकृष्ण का जन्म 18 सितंबर 1910 को राँची के अपर बाजार में हुआ था और उनका निधन 3 फरवरी 1979 को हुआ। वे उपन्यासकार, नाटककार, कहानीकार, बाल साहित्यकार, व्यंगकार तथा संपादक थे। उनकी रचनात्मकता किसी एक साहित्यिक विधा तक सीमित नहीं थी। उनके साहित्य में सामान्य मनुष्य का जीवन, मानवीय संवेदना, हास्य–व्यंग्य, सामाजिक विषमता, आर्थिक अभाव, ग्रामीण एवं नगरीय जीवन, आदिवासी समाज तथा झारखंड की सांस्कृतिक चेतना अनेक स्तरों पर दिखाई देती है।
राधाकृष्ण को राँची और झारखंड के साहित्यिक परिवेश में 'लाल बाबू' के नाम से भी जाना जाता था। उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की विशेषता यह थी कि वे एक ओर गंभीर कथा–साहित्य लिखते थे, तो दूसरी ओर हास्य–व्यंग्य के माध्यम से समाज की विसंगतियों पर तीखा प्रहार करते थे। यही कारण है कि उनके व्यक्तित्व में संवेदनशील कथाकार और सजग व्यंग्यकार दोनों एक साथ दिखाई देते हैं।

राधाकृष्ण का जीवन–संघर्ष

राधाकृष्ण का जीवन बचपन से ही संघर्ष में बीता। उनका जन्म ऐसे परिवार में हुआ था जहाँ आर्थिक परिस्थितियाँ बिल्कुल भी ठीक नहीं थी। पैसे के अभाव के कारण बहुत तंगी में जीवन बिताना पड़ा था। उनके पिता "रामजतन" कचहरी में मुंशी का काम करते थे, लेकिन बचपन में ही पिता का निधन हो जाने के कारण परिवार की जिम्मेदारियाँ कठिन परिस्थितियों में आ गईं। उनकी माता ने संघर्ष करते हुए उनका पालन–पोषण किया। जीवन के आरंभिक अभावों ने राधाकृष्ण के व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव डाला। बाद में उनके साहित्य में सामान्य और संघर्षशील मनुष्य के जीवन की जो मार्मिक अभिव्यक्ति दिखाई देती है, उसके पीछे उनके अपने जीवन–अनुभवों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।
इतने कठिन परिस्थितियों के बावजूद भी राधा कृष्ण ने साहित्य को अपना जीवन–धर्म बनाया। उनकी साहित्यिक यात्रा बहुत कम उम्र में आरंभ हो गई थी। राधाकृष्ण ने साहित्य में प्रवेश उस समय किया जब हिंदी कहानी प्रेमचंद के प्रभाव से सामाजिक यथार्थ की ओर तेजी से बढ़ रही थी। इसी के कारण उनकी रचनाओं में भी समाज और व्यक्ति के संबंधों को समझने की कोशिश दिखाई देती है।
उनकी पहली प्रकाशित कहानी 'सिन्हा साहब' मार्च 1929 में 'हिंदी गल्प–माला' में प्रकाशित हुई थी। इसके बाद उनकी रचनाएँ ''हंस', 'माया', महावीर', श्जन्मभूमि', 'संदेश', 'भविष्य', 'माधुरी' और 'जागरण' जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही।

इनके उपनामों की पहचान

राधाकृष्ण के साहित्यिक व्यक्तित्व की पहचान बहुत ही रोचक था। वे अपनी राचनाओं के लिए अपना अलग–अलग नामों का उपयोग करते थे।
गंभीर कथा एवं राचना में वे 'राधाकृष्ण' नाम से लिखते थे, जबकि हास्य–व्यंग्य की रचनाओं के लिए श्बोस, घोष, बनर्जी, चटर्जी' नाम का प्रयोग करते थे। इन सब बातों की जानकारियाँ उनके प्रकाशित साहित्य और आलोचनात्मक ग्रंथो में मिलते है।
यह उपनाम अपने आप में व्यंग्यात्मक प्रभाव पैदा करता था। ये चार अलग–अलग बंगाली उपनामों को एक साथ जोड़कर बनाया

गया नाम पाठक के मन में जिज्ञासा और हास्य दोनों उत्पन्न करता था। इस नाम के पीछे राधाकृष्ण की रचनात्मक चंचलता और व्यंग्य–बोध दिखाई देता है।
राधाकृष्ण का एक लोकप्रिय नाम 'लाल बाबू' भी था। राँची के साहित्यिक और सामाजिक परिवेश में वे इसी नाम से जाने–पहचाने जाते थे। आज भी झारखंड के साहित्यिक संदर्भों में 'लाल बाबू' कहने पर ही राधाकृष्ण का स्मरण किया जाता है। उनका यह व्यक्तित्व केवल साहित्यिक दुनिया तक ही सीमित नहीं था। वे अपने आसपास के लोगों से आत्मीय संबंध बनाकर रखते थे और राँची की सांस्कृतिक दुनिया से बहुत ही गहरे लगाव के साथ जुड़े हुए थे। यही स्थानीय जुड़ाव उनके साहित्य को अत्यधिक विशिष्ट बनाता है।
राधाकृष्ण की सबसे बड़ी विशेषताओं में से एक बात यह भी थी कि उन्होंने महानगरों की साहित्यिक प्रसिद्धि के पीछे भागने के बजाय राँची और झारखंड को अपने कर्मक्षेत्र के रूप में चुना, क्योंकि यही से इनका लेखन कार्य शुरू हुआ था। वे लंबे समय तक राँची में रहे और यहीं रहकर साहित्य, रेडियो, पत्रकारिता तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में योगदान दिया। राधाकृष्ण की साहित्यिक भाषा बहुत ही सहज, सरल और प्रभावशाली है। वे कठिन शब्दों की जगह ऐसी भाषा का प्रयोग किये हैं जो सामान्य पाठक तक भी पहुँच सके और उन्हें आसानी से समझ में आ जाए। इसी कारण उनकी रचनाओं में साहित्यिकता के साथ–साथ संप्रेषणीयता भी बनी हुई दिखाई देती है।

कहानीकार के रूप में राधाकृष्ण

राधाकृष्ण की साहित्यिक पहचान मुख्य रूप से एक कथाकार के रूप में बनी। उनकी पहली कहानी 'सिन्हा साहब' के प्रकाशन के बाद, कहानी–लेखन लगातार आगे बढ़ता गया। कहानियों में समाज के सामान्य लोगों का जीवन, उनकी समस्याएँ, संबंधों की जटिलता और जीवन की विडंबनाएँ दिखाई देती हैं। रामलीला, सजला, गेंद और गोल, गल्पिका ये उनके कहानी संग्रह है।
उनकी कहानियों में पात्र केवल कहानी को आगे बढ़ाने के काम नहीं करते। बल्कि वे तो समय और समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। पात्रों के माध्यम से ही लेखक सामाजिक संरचना की वास्तविकताओं को सामने लाता है।

हास्य और व्यंग्य के समर्थ रचनाकार

राधाकृष्ण के साहित्य का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष उनका हास्य–व्यंग्य है। उनके लिए हास्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं था। वे तो इसी हास्य के माध्यम से सामाजिक विसंगतियों, पाखंड, दिखावे और व्यवस्था की कमजोरियों को सामने लाने का प्रयास करते थे। उनका व्यंग्यात्मक रचना जीवन से जुड़ा हुआ है। उनकी व्यंग्यात्मक रचनाओं में 'चंद्रगुप्त की तलवार' और 'एक गांधीवादी बैल की कथा' विशेष रूप से उल्लेखनीय है।
आलोचनात्मक ग्रंथो में इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि उन्होंने अपने समय की हास्य–लेखन परंपरा में सामाजिक प्रतिबद्धता को मजबूत किया था और हास्य–व्यंग्य को सामाजिक सरोकार से जोड़ने का प्रयास भी किया। वे ऐसे व्यंग्यकार थे जिनके लिए हँसी के पीछे सामाजिक प्रश्न छिपे हुए रहते थे।

उपन्यासकार के रूप में योगदानः–

राधाकृष्ण ने कहानी के साथ–साथ उपन्यास के क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है:– इनके उपन्यास में 'बोगस', 'सनसनाते सपने 'फुटपाथ', 'रूपांतर', और 'सपने बिकाऊ हैं' आदि प्रमुख हैं।
इन उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने व्यक्ति और समाज के बीच के तनाव, जीवन की आकांक्षाओं तथा सामाजिक वास्तविकताओं को अभिव्यक्ति दी है। विशेष रूप से 'फुटपाथ' शीर्षक ही आधुनिक सामाजिक जीवन के एक महत्त्वपूर्ण पक्ष की ओर संकेत करता है। फुटपाथ केवल सड़क के किनारे की जगह नहीं है, बल्कि समाज के उन लोगों का प्रतीक भी माना जा सकता है जो मुख्यधारा से बाहर जीवन जीने के लिए विवश हैं। इसी प्रकार 'रूपांतर' उनके रचनात्मक वैविध्य का उदाहरण है। विचारोत्तेजक के रूप में है, ये रूपांतर जो जीवन से ही जुड़ा है।

झारखंड के सांस्कृतिक जीवन से गहरा संबंध

राधाकृष्ण का सबसे बड़ा योगदान केवल हिंदी साहित्य की रचनाओं तक ही नहीं है। उनका संबंध झारखंड की क्षेत्रीय एवं जनजातीय सांस्कृतिक चेतना के विकास से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।
वे हमेशा से यही चाहते थे कि झारखंड के लोकजीवन, लोकभाषाओं, स्थानीय समाज, और मौखिक परंपराओं को साहित्यिक अभिव्यक्ति मिले। इसी के कारण उन्होंने राँची में रहकर जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं के विकास के लिए काम किया। जब क्षेत्रीय समाज की अनेक सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ लिखित साहित्य में पर्याप्त रूप से दर्ज नहीं हो पा रही थी तब वहाँ के लिए उनका ये योगदान बहुत बड़ा एवं महत्वपूर्ण था। राधाकृष्ण ने साहित्य को केवल पुस्तक तक सीमित नहीं माना। उनके लिए तो ये साहित्य समाज की स्मृति को सुरक्षित रखने का माध्यम भी था।

''आदिवासी'' पत्रिका और राधाकृष्ण

राधाकृष्ण के जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में 'आदिवासी' पत्रिका का संपादन माना जाता है। 1947 में उन्हें बिहार सरकार की पत्रिका 'आदिवासी' का संपादक बनाया गया था। इसका प्रकाशन केंद्र राँची था और वे लंबे समय तक इसके संपादन से जुड़े रहे।
इस पत्रिका के माध्यम से ही जनजातीय समाज की संस्कृति, लोकजीवन और साहित्य को अभिव्यक्ति का मंच मिला। इस पत्रिका के आरंभिक अंकों में नागपुरी भाषा का भी प्रयोग हुआ था और इसके माध्यम से ही जनजातीय मौखिक साहित्य को लिखित रूप में सामने लाने का प्रयास किया गया।
यह तो राधाकृष्ण की दूरदर्शिता का प्रमाण है। उन्होंने समझा कि किसी समाज को समझने के लिए केवल उसके राजनीतिक इतिहास को जानना पर्याप्त नहीं है। उसके लिए तो लोकगीत, लोककथाएँ, पर्व–त्योहार, भाषा, रीति–रिवाज और मौखिक परंपराओं को समझना भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। 'आदिवासी' पत्रिका के कारण ही झारखँड की स्मृति और संस्कृतियों को भी बचाया गया।
राधाकृष्ण ने 'आदिवासी' के माध्यम से क्षेत्रीय एवं जनजातीय रचनाकारों को साहित्यिक मंच उपलब्ध कराया। बहुत से रचनाकारों के विकास में इस पत्रिका की भूमिका का भी उल्लेख मिलता है। यहाँ राधाकृष्ण की भूमिका केवल संपादक की नहीं थी। वे तो एक प्रकार से साहित्यिक सेतु का कार्य कर रहे थे। एक ओर हिंदी का व्यापक साहित्यिक संसार था और दूसरी ओर झारखंड का स्थानीय एवं जनजातीय साहित्य। राधाकृष्ण ने इन दोनों के बीच संवाद स्थापित करने की कोशिश की। उनकी यह दृष्टि आज के समय में और भी महत्त्वपूर्ण लगती है, क्योंकि आज साहित्य में स्थानीयता, लोकसंस्कृति, अस्मिता और आदिवासी विमर्श पर गंभीर चर्चाऐं हो रही है।

"पत्रकार" और "संपादक" के रूप में राधाकृष्ण

राधाकृष्ण केवल रचनाकार नहीं थे, वे सक्रिय संपादक भी थे। वे 'महावीर', 'हंस', 'माया', 'संदेश', 'झारखंड', 'कहानी' और 'आदिवासी' पत्रिका में संपादन कार्य किया है। संपादन का कार्य किसी लेखक की व्यक्तिगत रचना से अलग होता है। संपादक

को विभिन्न प्रकार के लेखकों, विषयों और विचारों के बीच संतुलन बनाना पड़ता है। राधाकृष्ण ने इन दोनों जिम्मेदारी को गंभीरता से निभाया। उनका संपादकीय दृष्टिकोण साहित्य को समाज से जोड़ने वाला था। वे नए लेखकों और क्षेत्रीय प्रतिभाओं को अवसर देने के पक्षधर थे। वे हमेशा निष्पक्ष काम किया करते थे।

राधाकृष्ण का संबंध आकाशवाणी से भी रहा। वे पटना आकाशवाणी में नाटक निर्माता के रूप में कार्यरत रहे। फिर बाद में 27 जुलाई 1957 को राँची में आकाशवाणी केंद्र की स्थापना होने पर वे राँची चले गए। उनको रेडियो के माध्यम से साहित्य को व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाने का अवसर मिला। नाटक, संवाद और कथात्मक प्रस्तुति के क्षेत्र में उनकी साहित्यिक दक्षता का लाभ रेडियो को भी मिला।

राधाकृष्ण का साहित्यिक जीवन केवल किताबों और पत्रिकाओं तक सीमित नहीं रहा। वे मुद्रित साहित्य के साथ–साथ श्रव्य माध्यम से भी जुड़े रहे थे।

प्रेमचंद से संबंध और साहित्यिक परंपरा

राधाकृष्ण का प्रेमचंद से संबंध केवल साहित्यिक प्रभाव तक सीमित नहीं था, बल्कि व्यक्तिगत और साहित्यिक दोनों स्तरों पर था। मुंशी प्रेमचंद के निधन के बाद, उनकी पत्नी शिवरानी देवी के आग्रह पर राधाकृष्ण ने प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका 'हंस' के संपादन का दायित्व भी संभाला। यह घटना राधाकृष्ण के साहित्यिक जीवन में विशेष महत्त्व रखती है। 'हंस' जैसी प्रतिष्ठित पत्रिका का संपादन उनके प्रति प्रेमचंद परिवार के विश्वास और उनकी साहित्यिक क्षमता का प्रमाण माना जा सकता है।

राधाकृष्ण का साहित्यिक विकास उस समय हुआ, जब हिंदी कहानी और उपन्यास को मुंशी प्रेमचंद सामाजिक यथार्थ और जनजीवन से जोड़ने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहे थे। राधाकृष्ण की कथा–दृष्टि पर भी प्रेमचंद की सामाजिक सरोकार वाली परंपरा का प्रभाव दिखाई देता है। प्रेमचंद राधाकृष्ण की प्रतिभा से बहुत प्रभावित थे, राधाकृष्ण को उनका साथ भी मिला और प्रोत्साहन भी। राधाकृष्ण ने प्रेमचंद की तरह ही अपने कथा के केंद्र में समाज के विसंगतियों को रखा, लेकिन उनकी अपनी विशिष्टता हास्य–व्यंग्य और क्षेत्रीय जीवन की अभिव्यक्ति में थी। इसी के कारण उन्हें केवल प्रेमचंद का अनुयायी कहना उचित नहीं है। जिस प्रकार प्रेमचंद ने सामाजिक यथार्थवादी कथा–परंपरा को सशक्त बनाया। वहीं राधाकृष्ण ने उसे अपनी स्थानीय संवेदना, हास्य–व्यंग्य और झारखंडी जीवनानुभवों के साथ आगे बढ़ाया।

उपेक्षित साहित्यकार क्यों माना गया?..

राधाकृष्ण ने इतना महत्त्वपूर्ण साहित्यिक योगदान दिया, फिर भी उनको हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में वह स्थान नहीं मिला जिसके वे अधिकारी थे। समकालीन और बाद के आलोचनात्मक लेखों में भी उन्हें 'उपेक्षित' या 'विस्मृत' साहित्यकार के रूप में याद किया गया है। मेरे ख्याल से इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि उन्होंने तो अपना अधिकांश जीवन राँची में बिताया और दिल्ली, इलाहाबाद, बनारस जैसे प्रमुख साहित्यिक केंद्रों से लंबे समय तक दूर रहे। ज्यादा लोगों तक उनकी प्रतिभा की बातें नहीं पहुँच पाई। ये जो स्थिति है वह हिंदी साहित्य के इतिहास के लिए एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न खड़ा करती है—क्या साहित्यिक प्रतिष्ठा केवल महानगरों और साहित्यिक संस्थानों के केंद्र में रहने वाले लेखकों को ही मिलनी चाहिए? राधाकृष्ण जैसे लेखको की नहीं, जबकि समाज में ज्यादा योगदान तो उन्होंने ही दिया है। राधाकृष्ण का साहित्य इस प्रश्न पर पुनर्विचार करने की माँग करता है।

आज के संदर्भ में राधाकृष्ण की प्रासंगिकता

आज जब साहित्य में लोकसंस्कृति, सामाजिक, क्षेत्रीयता, आदिवासी विमर्श, न्याय और हाशिए समाजों की आवाज पर गंभीर चर्चा हो रही है, तब राधाकृष्ण के साहित्य को फिर से पढ़े जाने की जरूरत महसूस होती है। सांस्कृतिक और साहित्यिक गतिविधियों को बढ़ावा उन्होंने 'आदिवासी' पत्रिका के माध्यम से दिया था। आज उसका महत्व इसलिए बढ़ा हुआ दिखाई दे रहा है, क्योंकि मौखिक परंपराओं और स्थानीय भाषाओं के संरक्षण की आवश्यकता लगातार बढ़ती जा रही है। राधाकृष्ण ने तो अपने समय में ही समझ लिया था कि भविष्य में भारत की वास्तविक सांस्कृतिक शक्ति, उसकी विविधता में है। झारखंड के जनजातीय और क्षेत्रीय जीवन को साहित्यिक मंच देना उनकी दूरदृष्टि का ही प्रमाण है।

निष्कर्ष

"राधाकृष्ण" उर्फ 'लाल बाबू' हिंदी साहित्य के ऐसे बहुआयामी रचनाकार थे, जिन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से समाज, सामान्य जनजीवन और झारखंड की सांस्कृतिक चेतना को बहुत ही प्रभावशाली अभिव्यक्ति प्रदान की। उनका साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि उनके साहित्य में तो सामाजिक सरोकार, मानवीय संवेदना, हास्य–व्यंग्य और जीवन की वास्तविक परिस्थितियों का सजीव चित्रण मिलता है। उनका जीवन बचपन से ही संघर्ष में शुरू और निरंतर चलता रहा। उतना कठिन जीवन–परिस्थितियों के कारण भी उन्होंने साहित्य–सृजन को निरंतर जारी रखा, उन्होंने सिर्फ एक विधा में ही रचना नहीं किया बल्कि उपन्यास, नाटक, कहानी, व्यंग्य तथा बाल साहित्य जैसी अनेक विधाओं में अपनी रचनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया। रामलीला', 'सजला', 'गल्पिका', 'गेंद और गोल' और 'चंद्रगुप्त की तलवार' जैसी रचनाएँ उनकी कहानी और व्यंग्य लेखन की विविधता को सामने लाती हैं। वहीं 'फुटपाथ', 'रूपांतर', 'बोगस', 'सनसनाते सपने' और 'सपने बिकाऊ हैं' जैसे उपन्यास उनके उपन्यासकार रूप को स्पष्ट करते हैं।

राधाकृष्ण का साहित्यिक जीवन केवल रचनाएँ लिखने तक सीमित नहीं था। उन्होंने संपादन के माध्यम से भी समाज और साहित्य के बीच एक मजबूत संबंध बनाने का काम किया। वर्ष 1947 में बिहार सरकार की पत्रिका 'आदिवासी' के संपादक के रूप में उन्होंने जिम्मेदारी संभाली। इस पत्रिका के जरिए झारखंड के आदिवासी समाज, उनकी परंपराओं और स्थानीय जीवन को साहित्य में जगह मिली। इसके साथ ही, क्षेत्र के अनेक रचनाकारों को अपनी रचनात्मकता सामने लाने का अवसर भी प्राप्त हुआ। ये 'आदिवासी' पत्रिका राधाकृष्ण के सांस्कृतिक सरोकारों को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। राधाकृष्ण की सबसे बड़ी विशेषताओं में से एक बात यह थी कि उनका साहित्य अपने समय और समाज से गहराई से जुड़ा हुआ था। उन्होंने उन लोगों और जीवन–स्थितियों को भी अपनी रचनाओं में जगह दिया, जिन्हें मुख्यधारा के साहित्य में अपेक्षाकृत कम जगह मिलती थी। आज जब क्षेत्रीय समाज, लोकजीवन, जनजातीय संस्कृति और हाशिए के लोगों की आवाज को साहित्य में नए महत्व के साथ देखा जा रहा है, तब राधाकृष्ण की रचनाएँ और अधिक प्रासंगिक दिखाई देती हैं। उनके साहित्य का पुनर्पाठ हमें यह समझने में मदद करता है कि हिंदी साहित्य की वास्तविक समृद्धि केवल बड़े शहरों और चर्चित साहित्यकारों तक सीमित नहीं है। राधाकृष्ण ने राँची को केवल अपने रहने का स्थान नहीं बनाया, बल्कि उसे अपनी सृजनभूमि के रूप में स्वीकार किया। यही उनकी साहित्यिक पहचान की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। जिस दौर में साहित्यिक गतिविधियों का केंद्र मुख्य रूप से बड़े नगर हुआ करते थे, उस समय राँची में रहकर साहित्य रचना करना अपने आप में उल्लेखनीय था। उन्होंने स्थानीय जीवन को

नजदीक से देखा, वहाँ के लोगों और संस्कृति को समझा और अपने साहित्य में उसे अभिव्यक्ति दी। उनका साहित्य यह विश्वास पैदा करता है कि एक सच्चा रचनाकार अपने आसपास के जीवन से जुड़कर भी ऐसे प्रश्न उठा सकता है, जिनका संबंध पूरे समाज और मनुष्य से हो। राधाकृष्ण की रचनाओं में मनुष्य के सुख–दुख, सामाजिक परिस्थितियाँ, संघर्ष, संवेदनाएँ और जीवन की अनेक जटिलताएँ सहज रूप में दिखाई देती हैं। राधाकृष्ण को केवल झारखंड के एक साहित्यकार के रूप में देखना न्यायसंगत नहीं होगा। वे तो हिंदी साहित्य की मुख्यधारा और झारखंड के स्थानीय जीवन के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु के रूप में दिखाई देते हैं। रचना, संपादन और पत्रकारिता—तीनों क्षेत्रों में उनकी सक्रियता ने उनके साहित्यिक व्यक्तित्व को बहुत ही व्यापक बनाया है। आज राधाकृष्ण को नए संदर्भों में पढ़ना इसलिए आवश्यक है, क्योंकि उनके साहित्य में हमें समाज, संस्कृति और मनुष्य—तीनों को एक साथ समझने की दृष्टि मिलती है।

उपसंहार

राधाकृष्ण 'लाल बाबू' हिंदी साहित्य के उन महत्त्वपूर्ण रचनाकारों में से हैं जिनका मूल्यांकन अभी भी पूरी गंभीरता से किया जाना आवश्यक है। उन्होंने साहित्य को केवल मनोरंजन का साधन नहीं माना, बल्कि समाज को समझने और सामाजिक चेतना को जागृत करने का माध्यम बनाया। आज आवश्यकता है कि उनके साहित्य का पुनर्पाठ किया जाए, उनकी कहानियों और उपन्यासों पर गंभीर शोध किया जाए और 'आदिवासी' पत्रिका के उनके संपादकीय योगदान का व्यवस्थित अध्ययन किया जाए तब ही हम उन्हें हिंदी साहित्य के इतिहास में वह स्थान दिला पाएंगे , जिसके वे वास्तव में अधिकारी हैं। ऐसा अगर हम सब नहीं करेंगे तो एक ऐसे साहित्यकार के साथ अन्याय होगा, जिसने झारखंड के साथ सभी मानवीय मूल्यों के साथ न्याय किया था। राधाकृष्ण का साहित्य हमें यह सिखाता है कि साहित्य की वास्तविक शक्ति उसके केंद्र में नहीं, बल्कि उसके सरोकारों में होती है। जिस लेखक की दृष्टि अपने समय के सामान्य मनुष्य, अपने समाज और अपनी संस्कृति से जुड़ी हो, उसकी रचनाएँ समय बीतने के बाद भी प्रासंगिक बनी रहती हैं। राधाकृष्ण 'लाल बाबू' झारखंड ही नहीं, बल्कि हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक विरासत हैं।

उनकी रचनाओं में एक ओर सामान्य मनुष्य का संघर्ष है, तो दूसरी ओर सामाजिक विसंगतियों पर तीखा व्यंग्य। एक ओर कहानी और उपन्यास का गंभीर संसार है, तो दूसरी ओर नाटक और बाल साहित्य की सहज दुनिया। एक ओर हिंदी साहित्य है, तो तीसरी ओर झारखंड की क्षेत्रीय और जनजातीय संस्कृति के प्रति गहरा लगाव। उनका 'आदिवासी' पत्रिका से जुड़ाव विशेष रूप से ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। उन्होंने क्षेत्रीय और जनजातीय समाज की सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को साहित्यिक मंच देने का प्रयास किया।

उनके जीवन का सबसे प्रेरणादायक पक्ष यह है कि कठिन आर्थिक परिस्थितियों और साहित्यिक केंद्रों से दूरी के बावजूद उन्होंने लेखन नहीं छोड़ा। उन्होंने राँची को अपनी कर्मभूमि बनाया। राधाकृष्ण केवल एक साहित्यकार नहीं, बल्कि हिंदी साहित्य की सृजनात्मक और सामाजिक चेतना के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। उनका साहित्य आज भी पाठकों को जीवन की वास्तविकताओं से परिचित कराता है और मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदनशील बनाता है। साहित्य के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और उनकी रचनात्मक दृष्टि उन्हें हिंदी साहित्य में विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। उनके साहित्य का पुनर्पाठ आज के बदलते सामाजिक संदर्भों में भी बहुत प्रासंगिक है।।

संदर्भ

1. राधाकृष्ण। फुटपाथ। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
2. राधाकृष्ण। गेंद और गोल। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
3. राधाकृष्ण। रामलीला। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
4. राधाकृष्ण। चंद्रगुप्त की तलवार। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
5. गोस्वामी, श्रवणकुमार। हिंदी के साहित्य निर्माता राधाकृष्ण। राँची: सेवा संकल्प।
6. राधाकृष्ण। रूपांतर। नई दिल्ली: भारतीय साहित्य प्रकाशन।
7. राधाकृष्ण। सजला। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
8. हिंदवी। "राधाकृष्ण का जीवन परिचय।" हिंदवी।
9. राजकमल प्रकाशन। "राधाकृष्ण: लेखक परिचय एवं कृतियाँ।" राजकमल प्रकाशन। ।